International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 321-322

लोहे के आविष्कार और द्वितीय नगरीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव

गौरव कुमार राय
शोध छात्र, नेहरू ग्राम भारती विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

छठी शताब्दी ई0पू0 में लोहे की जानकारी और इसके व्यवहार ने न सिर्फ आर्यों के गंगा घाटी में प्रसार में सहायता पहुँचायी बल्कि उनकी अर्थव्यवस्था को भी क्रान्तिकारी रूप से प्रभावित किया। लोहे का कृषि में उपयोग होने से कृषि का विस्तार सम्भव हुआ। लोहे के बने हल के फाल की सहायता से खेतों की गहरी जुताई सम्भव हुई जिसके फलस्वरूप कृषि का उत्पादन बढ़ा। परिणामतः किसान अपनी आवश्यकता से अधिक अनाज का उत्पादन करने लगा। इस अधिक उत्पादन को अवशेष उत्पादन कहा जा सकता है। इस उत्पादन के लिए कृषि क्षेत्र में पशुधन की आवश्यकता का अनुभव हुआ। जिसके फलस्वरूप पशुबलि पर कालान्तर में प्रतिबन्ध लगना प्रारम्भ हो गया। पशुओं की संख्या में वृद्धि के परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया। अब लोग अपनी अवश्यकता से अत्यधिक उत्पादन करने में सक्षम हुए।

600 ई0पू0 लौह धातु अभियान्त्रिकी के पर्याप्त विकास के साथ–साथ कृषि योग्य जल की उपलब्धता के परिणामस्वरूप अब उत्पादन अधिशेष होने लगा। अब बड़े पैमाने पर बस्तियों की स्थापना हुई और जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि के साथ ही समाज मे नवीन वर्गों का उदय हुआ। घाटी क्षेत्र में कृषि कार्य का प्रमाण ऋग्वैदिक काल से ही मिलते हैं।

चित्रित धूसर मृदभाण्ड स्थलों से यह संकेत मिलता है कि घाटी क्षेत्र में विश्वस्त एवं निरन्तर जीविका के स्रोतों के आधार पर अनवरत बस्तियां विद्यमान रहीं जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि था। छान्दोग्य उपनिषद् में अन्न के महत्व पर बल दिया गया है। साथ ही अधिक अन्न उपजाओं का नारा भी दिया गया है।

कृषि में लोहे के उपकरणों के उपयोग के फलस्वरूप अधिशेष उत्पादन के साथ–साथ फसलों में विविधता भी आयी। पाणिनि के अनुसार पाँचवी सदी ई0पू0 तक खेत दो या तीन बार जोते जाते थे और फसलों का वर्गीकरण होता था। प्रारम्भिक बौद्ध पाठों मे उत्तम, मध्यम और निकृष्ट खेतों का जिक्र हआ। उनसे सिंचाई ज्ञान और खेती बारी की फसीलवार प्रक्रियाओं की भी जानकारी मिलती है। 6वीं शताब्दी ई0पू0 तक धान को बोने के बजाय रोपने का तरीका अपनाया गया। साथ ही यहॉ गेहूँ, जौ, मोटे अनाज, कपास और गन्ना की भी खेती होती थी।

नई कृषि अर्थव्यवस्था में पशुपालन भी सहायक था। पशुओं ने कृषि कार्य की उन्नति में अधिक योगदान दिया। यद्यपि वैदिक कालीन अर्थव्यवस्था भी पशुपालन पर आधारित थी परन्तु इनकी कृषि पशुपालन से सम्बद्ध नहीं थी। गंगा घाटी में पशुओं का पालन कृषि के निमित्त नहीं अपितु गाय बैल आदि पशुओं का पालन मॉस खाने के लिए होता था। जैसे पलायू की निकोशिया जनजाति द्वारा आज भी किया जाता है।

छठी शताब्दी ई0पू0 शतपथ ब्राह्मण में गौ–मांस भक्षण पर विवाद परिलक्षित होता है। इसमे यह तर्क दिया गया है कि उस व्यक्ति को गौ–मांस भक्षण नहीं करना चाहिए जो यज्ञ के लिए निश्चित है। परन्तु याज्ञवल्क्य ने यह तर्क दिया है कि वह गौ–मांस खायेगा क्योंकि इससे उसका शरीर मोटा होता है। बौद्धों ने नई कृषि व्यवस्था को महत्व प्रदान किया और पशुबलि का बहिष्कार तथा पशुओं की हिंसा पर बल दिया। ऋग्वेद मे अघन्या शब्द अथवा न मारने योग्य बहुधा दूध देने वाली गायों के लिए प्रयुक्त हुआ है। सुत्तनिपात के अनुसार ब्राह्मणों को बुद्ध पशुओं की रक्षा का उपदेश देते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि पशुधन कृषि पर निर्भर थी। यद्यपि कृषि के पशुधन की सुरक्षा आवश्यक थी। परन्तु आवश्यकताओं की पूर्ति भी आवश्यक थी। अतः बौद्ध सम्भवतः गौ–मांस की अपेक्षा सुअर का मांस पसन्द करते थे। कहा जाता है कि वैशाली के एक गृहस्थ उग्ग ने बुद्ध को चावल रोटी सुअर का मांस तथा काशी के वस्त्र अर्पित किये थे। इस प्रकार छठवीं शताब्दी ई0पू0 कृषि मे पशुओं के महत्व को स्वीकार करते हुए उनकी रक्षा कृषकों का मुख्य कार्य हो गया।

कृषि के उन्नत ज्ञान और कारगर उपकरणों के उपयोग से किसान अधिक अधिशेष का उत्पादन करने लगे। जो पत्थर अथवा तांबे के उपकरणों से प्राप्त करना सम्भव नही था। इसमे उत्तरी–पूर्वी भारत में लगभग 600 ई0पू0 में नगरीय बस्तियों की पृष्ठभूमि तैयार की। पाली ग्रन्थों मे 20 नगरो की चर्चा है। जिनमे 6 बुद्ध की मृत्यु से सम्बन्धित थे। पुरातत्व द्वारा मध्य गंगा घाटी क्षेत्र मे इस काल के अनेक नगर प्रकाश मे आये। परन्तु लौह तकनीक के फलस्वरूप कृषि ने अधिशेष उत्पादन ने नगरो के विकास का मार्ग प्रशस्त किया।

छठी शताब्दी ई0पू0 साहित्यिक स्रोतो में बड़े–2 नगरों का उल्लेख मिलता है। जिसमे कौशांबी श्रावस्ती, अयोध्या, कपिलवस्तु, वाराणसी, वैशाली राजगृह, चंपा, तक्षशिला, इत्यादि का उल्लेख किय जा सकता है। बुद्धकाल में पाटलिपुत्र का उल्लेख नगर के रूप मे नही बल्कि पाटलिग्राम के रूप मे हुआ था। इस काल मे नगरो के निर्माण में पकाई गई ईंटों का प्रयोग किया गया है।

छठी शताब्दी ई0पू0 व्यापार का विकास शहरीकरण का कारण और परिणाम था। अब नगर अन्तोगत्वा एक प्रकार से बाजार बन गये। प्रत्यक्षतः दस्तकार तथा सेट्ठि कहे जाने वाले व्यापारी नगरीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग थे। ये व्यापार एवं उद्योग में संलग्न रहते थे। जातकों मे पांच–पांच सौ या हजार–हजार गाड़ियों के सार्थों के एक स्थान से दूसरी स्थान को जाने के अनेक उल्लेख मिलते है।

आहत मुद्राओं के प्रयोग से व्यापार में सुगमता आयी। वेदोत्तर काल मे धातु के सिक्के के इस्तेमाल को बढ़ावा मिला। वैदिक साक्ष्यों के बावजूद पूर्ववर्ती काल में सिक्कों का चलन संदिग्ध ही मालूम होता है। भारत मे प्राप्त प्राचीन सिक्के बुद्ध काल के पहले के हैं। स्तर विन्यास की दृष्टि से आहत मुद्राएं 5वीं शताब्दी ई0पू0 की मानी जाती है और इनका प्रचलन कुछ पहले ही प्रारम्भ हुआ था। जिन

पर धातु के टुकड़ों पर आकृतियों के ठप्पे मारे जाते थे। अतः ये सिक्के आहत (पंच मार्क्ड) सिक्के कहलाते हैं। आहत मुद्राओं के 300 से अधिक जखीरे ज्ञात होते है। इनमें से बहुत से सिक्के मध्य गंगा क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं।

इस काल मे एक नवीन प्रकार के मिट्टी के बर्तन पहली बार अस्तित्व मे दिखाई पड़ते है। उन बर्तनों को उत्तरी काले आपेदार मृदभाण्ड कहा जाता था। इन बर्तनों का प्रयोग अनुष्ठानों अथवा खान–पान के निमित्त होता था और इसने व्यापार में महत्वपूर्ण सहायता पहुंचायी होगी। ये बर्तन सुगढ़ बनावट वाले चिकने तथा चमकदार होते थे। 6वीं शताब्दी ई0पू0 के प्रारम्भिक बौद्ध पाठों में धोबी, रंगरेज, रंगसाज, नाई, दर्जी, बुनकर और रसोइए जैसे सेवा कार्यों में लगे लोगों के अलावा वस्तु–निर्माण के अनेक शिल्पों के भी उल्लेख मिलते है।

छठी शताब्दी ई0पू0 में सामाजिक जीवन की सबसे प्रमुख विशेषता वर्णव्यवस्था की जटिलता का बढ़ना था। अब वर्णव्यवस्था की जटिलता का बढ़ना था। अब व्यवसाय के आधार पर नहीं, अपितु जन्म के आधार पर जाति एवं वर्ण निर्धारित होने लगे। ब्राह्मणग्रन्थों में अब समाज को चार प्रमुख वर्णो–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभक्त दिखाया गया है। बौद्धग्रंथ भी इस वर्ण विभाजन का उल्लेख करते है

छठी शताब्दी ई0पू0 समाज में कई नवीन वर्गो का उदय हुआ। इस नवीन व्यवसायिक वर्गो के उदय के साथ–साथ इस काल में वैसी बस्तियों की स्थापना हुयी। जहाँ एक ही प्रकार के व्यवसायी निवास करते थे, कारीगर और शिल्पी बहुधा श्रेणियों एवं नियमों से संगठित होते थे। प्रत्येक श्रेणी का अपना प्रधान (जेट्ठक) होता था।

कृषि तथा व्यापार में परिवर्तन के परिणामस्वरूप शासक वर्ग एवं व्यापारी वर्ग अत्यधिक धनी होने लगे, जिससे समाज में आर्थिक असमानता एवं धन के अत्यधिक उपयोग ने समाज में ऋण एवं सूदखोरी प्रथा को जन्म दिया। यद्यपि वैदिक ग्रन्थों में भी ऋण की प्रथा विद्यमान थी, परन्तु सूद के प्रमाण स्पष्टतः नहीं मिलते है। परन्तु छठी शताब्दी ईसा पू0 धातु के सिक्कों के प्रचलन के साथ–साथ सूदखोरी की प्रथा भी प्रारम्भ हुयी।

छठी शताब्दी ईसा पूर्व शासक वर्ग द्वारा आर्थिक तथा प्रशासनिक व्यवस्था पर नियंत्रण स्थापित करने हेतु राज्यव्यवस्था का व्यापक विकास हुआ। यह राज्य–व्यवस्था कर प्रणाली तथा सैन्य शक्ति पर आधारित थी। कर–व्यवस्था की व्यवस्थित प्रक्रिया वैदिक काल में ही प्रारम्भ होती है। कर को इस काल में बलि भी कहा जाता था। कर प्रणाली का यही व्यवस्थित रूप छठी शताब्दी ईसा पूर्व में भी परिलक्षित होता है। मेगास्थनीज, एरियन तथा स्ट्रेबो के अनुसार कृषक राजा के लिए खेती करते थे। वे उपज का 1/6 या 1/4 भाग लगान के रूप में देते थे। कृषकों की 1/5 से 1/3 भाग सिंचाई कर के रूप में भी देना पड़ता था। इस प्रकार स्पष्ट है कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व कर प्रणाली का जो विकसित रूप परिलक्षित होता है। उसे विकास की प्रक्रिया वैदिक काल में ही आरम्भ हो चुकी थी।

इस काल में तकनीक एवं अधिशेष उत्पादन के परिणामस्वरूप विशाल एवं नवीन राज्यों की स्थापना हुयी। जिससे उन्हें करारोपड़ करने का निश्चित अवसर मिला और उन्होंने एक प्रकार की नौकरशाही को जन्म दिया। इस काल में राजा की सहायता के लिए पदाधिकारियों की नियुक्ति हुयी। जिसमें संग्रहीत, सूत , ग्रामणी, भागदुध पुरोहित आदि थे। ये लोग राजा के प्रति उत्तरदायी थी ओर इन्हें कर से प्राप्त धन में से वेतन दिया जाता था, तकनीक के विकास से अब सेना में नवीन अस्त्र–शस्त्रों जैसे रथ–मूसल आदि का प्रयोग होने लगा। इस प्रकार छठी ईसा पूर्व एक सुसंगठित प्रशासनिक व्यवस्था का विकास हुआ, जो व्यापक कर प्रणाली एवं सैन्य–शक्ति पर आधारित थी।

600 ई0पू0 में हुये धर्म सुधार आन्दोलन और नये धर्मो, विशेषतः बौद्ध और जैन धर्म के महत्व को भी स्वीकार्य करना पड़ता है। इन दोनों धर्मो का उदय ब्राह्मण, धार्मिक–सामाजिक व्यवस्था के विरोध स्वरूप हुआ। दोनों ने पशुधन की रक्षा के लिए– जो नयी अर्थव्यवस्था के विकास के लिए आवश्यक था– प्रतिबंध लगाया। आपस्तम्ब, बौद्धायन इत्यादि नगरी जीवन को घृणा की दृष्टि से देखते थे।

धार्मिक सम्प्रदायों में जैन धर्म के साथ–साथ बौद्ध धर्म का भी महत्वपूर्ण स्थान था। बौद्ध धर्म का मर्म आष्टांग मार्ग है। जिसमें सम्यक दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक वाक् सम्यक कर्मान्त, सम्यक जीवन, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति, सम्यक समाधि शामिल है। बौद्ध धर्म के अनुसार इस आष्टांगिक मार्ग का अनुसरण जो भी व्यक्ति करेगा, चाहे उसका सामाजिक मूल कुछ भी हो। वह निर्वाण की प्राप्ति करेगा।

इस प्रकार तत्कालीन धार्मिक विचार धारा ने समाज में व्याप्त बुराइयों, यक्षीय कर्मकाण्डों, अस्पृश्यता, पशुहत्या इत्यादि के खिलाफ प्रचार–प्रसार किया और समाज को नवीन परिवर्तन की ओर उन्मुख किया जो तत्कालीन परिवेश के अनुकूल थे।

सन्दर्भ

1. मनुस्मृति (मेधातिथि–भाष्य के साथ) : सं0 महामहोपाध्याय गंगानाथ झा, एशियाटिक सोसाइटी, कोलकाता, 1932।
2. ठाकुर विजय कुमार : प्राचीन भारत में नगरीकरण
3. शर्मा राम शरण : प्रारम्भिक भारत का आर्थिक और सामाजिक इतिहास
4. शर्मा राम शरण : प्रारम्भिक भारत का परिचय
5. श्रीमाली एवं झा : प्राचीन भारत का इतिहास
6. थापर, रोमिला : प्राचीन भारत का इतिहास
7. राय, जयमल : द रूरल–अरबन इकोनॉमी एण्ड सोशल चेन्ज इन एन्सिएन्ट इण्डिया।
8. शर्माः आर एस : एन्शिएन्ट इण्डिया
9. पाण्डेय, विमल चन्द्र : प्राचीन भारत का इतिहास भाग–1
10. ओम प्रकाश : प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास
11. शर्मा, आर0एस0 : प्राचीन भारत में भौतिक प्रगति एवं सामाजिक संरचनाएं
12. मिश्र जयशंकरः प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास
13. अग्रवाल, वासुदेव शरण : इंडिया एंज डिस्क्राइव बाई मनु
14. गुप्ता, डी0के0 : सोसाइटी एंड कलचर इन दि हाउस ऑफ दांडिन
15. झा, डी0एन0 : फ्युडल सोशल फर्मेश्रन इन अर्ली इंडिया
16. पाठक, वी0एस0 : एन्सियन्ट हिस्टोरियन्स ऑफ इडिया
17. थापर, रोमिला : एन्सियन्ट इडियन सोशल हिस्ट्री : सम इन्टरप्रटेशनस
18. बोस, ए0एन0 : सोशल एंड यरल इकानामी ऑफ नार्दन इंडिया
19. राय चौधरी, एच0सी0 : पालिटिकल हिस्ट्री आफ एनशिएन्ट इंडिया